पूर्वी उत्तर प्रदेश में अल्प विकास की राजनीतिः आजमगढ़ जनपद के विशेष सन्दर्भ में

बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय
लखनऊ से राजनीति विज्ञान विषय में
पीएच० डी० की उपाधि
हेतु प्रस्तुत

शोध सारांश

BABASAHEB
BHIMRAO
AMBEDKAR
UNIVERSITY
LUCKNOW
प्रज्ञा शील करुणा
ESTABLISHED 1996

शोध निर्देशक
प्रो० शशिकान्त पाण्डेय
राजनीति विज्ञान विभाग
अम्बेडकर अध्ययन विद्यापीठ
बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर
विश्वविद्यालय, लखनऊ

शोधकर्ता
राजीव कुमार प्रजापति
नामांकन संख्याः 289/12
राजनीति विज्ञान विभाग
अम्बेडकर अध्ययन विद्यापीठ
बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर
विश्वविद्यालय, लखनऊ

अम्बेडकर अध्ययन विद्यापीठ
बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय
(केन्द्रीय विश्वविद्यालय)
लखनऊ–226025
2018

शोध सारांश

विकास एक निरन्तर, गतिशील एवं बहुमुखी प्रक्रिया है, जिसमें ढाँचों, दृष्टिकोणों और संस्थाओं में परिवर्तन, आर्थिक सम्पदा में वृद्धि, असमानताओं की कमी और निर्धनता का उन्मूलन, परम्परागत् समाज का आधुनिक समाज में परिवर्तन इत्यादि शामिल है वहीं अल्पविकास को विकास के अभाव व गतिहीनता से दर्शाया जाता है। गुन्नार मृडल के शब्दों में ”अल्पविकास एक प्रक्रिया है जो कई तत्वों जैसे– रहन सहन की दशा, आय तथा उत्पादकता का निम्न स्तर, एवं निम्न आय के कारण पनपता है। यह स्थिर नहीं होता बल्कि राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं पर्यावरणीय वातावरण से सम्बन्धित होता है।”

गुन्नार मृडल और लरनर ने ”विकास” को राजनीतिक आधुनिकीकरण का पर्याय बताते हुये लिखा है कि अगर कोई समाज राजनीतिक दृष्टि से आधुनिक है अर्थात् उसमें सत्ता की बुद्धिसंगतता, संरचनाओं का विभिन्नीकरण एवं विशेषीकरण तथा सहभागिता पायी जाती है तो वह विकास की अवस्था मानी जायेगी अन्यथा वह समाज अथवा राज्य राजनीतिक रूप से अल्पविकसित है।

लुसियन पाई ने भी राजनीतिक अल्पविकास को परिभाषित करते हुए कहा है कि जिस राजनीतिक व्यवस्था में समानता न हो अर्थात् जिसमें सामान्य नागरिक सार्वजनिक तथा सामूहिक स्तर पर सहभागी न हो, राज्य या सरकार में आवश्यक कार्यों को करने, प्रशासन में विवेकपूर्ण कुशलता एवं योग्यता की क्षमता न हो तथा समाज एवं राज्य के विभिन्न अंगों, पदों एवं विभागों का स्पष्ट विभाजन न हो वह राज्य राजनीतिक रूप से अल्पविकसित होता हैं।

उपरोक्त परिभाषाओं के विश्लेषण से स्पष्ट है कि राजनीतिक अल्पविकास के दो महत्वपूर्ण आयाम हैं– **पहला** राज्य की स्वायत्तता तथा **दूसरा** शक्ति संरचना। जब राज्य का उद्देश्य विकास प्रक्रिया में किसी वर्ग विशेष का ध्यान न रखकर सार्वजनिक एवं लोकहित में कार्य करता है तथा जिसके अन्तर्गत भूखमरी से आजादी, आधुनिक कृषि विकास, भूमि सुधार और पुनः वितरण इत्यादि शामिल हो तो वह राज्य राजनीतिक रूप से स्वायत्त होता है और वह राज्य अल्पविकास से अर्थव्यवस्था को मुक्त करा

सकता है। इसके विपरीत वह राज्य जिसकी नीतियों में कुछ शक्तिशाली वर्गों के हितों की छवि पायी जाती है वह राज्य स्वायत्त नहीं होता और उसमें पुनः वितरण या विकास एवं प्रगति लाने की क्षमता की कमी रहती है। राज्य की स्वायत्तता उसके संरचना पर निर्भर करती है अर्थात् राज्य की अलग–अलग संस्थाओं के मध्य कितना समन्वय है। जैसे कार्यपालिका एवं व्यवस्थापिका के मध्य क्या सम्बन्ध हैं? सरकार एवं नौकरशाही के मध्य कैसा सम्बन्ध है? ये सारे तत्व राज्य की स्वायत्तता को निर्धारित करते हैं। अगर राज्य की संस्थाएँ आपस में सुसंगत होती हैं तो वह राज्य स्वायत्त होता है और वह तीव्रता से विकास के साथ–साथ पुनर्वितरण ला कर विकास कर सकता है। इसके विपरीत जिस राज्य में राज्य की संस्थाओं मे समन्वय की कमी रहती है उसकी स्वायत्तता सीमित होती है और उसमें विकास करने की क्षमता कम रहती है।

राजनीतिक अल्पविकास का दूसरा आयाम शक्ति संरचना है। जिस प्रकार समाज की सामाजिक संरचना में शक्तियों का विभाजन उसकी राजनीति को दर्शाता है उसी तरह ग्रामीण क्षेत्रो के विकास में स्थानीय स्तर पर जो भूमि सम्बन्ध होते हैं वह शक्ति संरचना को दर्शाता है। भारत में विशेषकर उत्तर प्रदेश के सन्दर्भ में यह भूमि सम्बन्ध तथा जो शक्ति विभाजन होता है वह सीधे–सीधे जाति व्यवस्था से जुड़ा हुआ है। भूमि सम्बन्ध जिसमें यह शक्ति संरचना उदय होती है उसकी एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि रही है। परन्तु आधुनिक समाज एवं राजनीति के स्थापित होने के बावजूद भी ये प्रभुत्वशाली वर्ग एवं उनके वर्चस्व की जो राजनीति है वह विभिन्न रूपों में उत्पन्न होती है जो स्थानीय सरकारी संस्थाओं जैसे–पंचायत, स्थानीय नौकरशाही एवं पुलिस इत्यादि पर अपना नियन्त्रण रखती है और प्रगति एवं विकास की दशा एवं दिशा को निर्धारित करती है।

यद्यपि द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अल्पविकसित देशों को उपनिवेशवादी शक्तियों से आजादी तो मिल गयी परन्तु इन राष्ट्र को नव उपनिवेशवादी खतरों का भय अभी भी बना हुआ है। इनमें से कुछ खतरे आन्तरिक हैं तो कुछ बाह्य। आज विश्व में बड़ी शक्तियों ने अल्पविकसित देशों के शोषण के लिए अनेक ऐसे गूढ़ तरीके निकाल लिए हैं जिससे कि वे स्वाधीन होते हुए भी उन पर निर्भर रहने के लिए मजबूर हो जाते हैं अर्थात् उपनिवेशवादी युग के बाद इन्हें नव–उपनिवेशवाद का शिकार बनाया जा रहा है। प्रारम्भ में उपनिवेशवादी शक्तियों ने इनका भरपूर शोषण करके इनका औद्योगिक

विकास अवरूद्ध कर दिया जिसके परिणाम स्वरूप इन अल्पविकसित देशों के पास अपना औद्योगिक विकास करने के लिए न तो पर्याप्त पूँजी है और न ही पर्याप्त तकनीक। अतः अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इन्हें विकसित देशों पर निर्भर रहना पड़ रहा है और विकसित देश किसी भी सहायता के लिए न केवल इन देशों से भारी कीमत वसूलते हैं बल्कि अनेक तरह से इनका शोषण भी करते हैं। उदाहरण स्वरूप आज भी चिली, ब्राजील, पनामा इत्यादि लैटिन अमेरीकी देश अमरीका से स्वतन्त्र होते हुए भी संयुक्त राज्य अमरीका के लिए कच्चे माल एवं सस्ते श्रम के स्त्रोत बने हुए हैं। भारत के भी बहुत सारे प्रतिभाशाली डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक एवं अन्य तकनीकी विशेषज्ञ प्रतिवर्ष अमरीका या अन्य विकसित देशों में पलायन कर जाते हैं। इस तरह एक अल्पविकसित देश का मूल्यवान और दुर्लभ संसाधन विकसित देशों में चला जाता है। इन देशों को उनके बदले में थोड़ी बहुत विदेशी सहायता मिलती है। इन परिस्थितियों में अल्पविकसित देशों के राष्ट्रीय स्वाधीनता को सुदृढ़ करने की विशेष आवश्यकता है जिसे आर्थिक एवं तकनीकी आत्मनिर्भरता, आत्मसम्मान और आत्मविश्वास के बल पर ही सुलझाया जा सकता है।

अल्पविकसित देशों की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इन देशों में भुखमरी, कुपोषण, बेरोजगारी, अशिक्षा, अत्यधिक जनसंख्या, गरीबी इत्यादि की समस्या बहुत गम्भीर है। अधिक जनसंख्या होने के कारण इनकी समस्याओं को सुलझाना कठिन है। दूसरी तरफ इनकी राजनीतिक व्यवस्था में इतनी विविधता पायी जाती है कि कई बार उन्हें एक श्रेणी में रखना सम्भव नहीं हो पाता जैसे– क्यूबा में एक दलीय साम्यवादी व्यवस्था, नाइजीरिया में सैनिक अधिनायक तन्त्र, भारत में बहुदलीय लोकतन्त्र आदि। परन्तु शासन प्रणालियों में इतनी विविधता के बावजूद अल्पविकसित देशों की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता इन देशों में सरकार की वैद्यता है, जो जनसाधारण के कल्याण उनकी सेवा और उनकी आकांक्षाओं की पूर्ति से जुड़ी है। इन देशों में विभिन्न प्रकार की राजनीतिक व्यवस्थाएँ इसलिए टिकी हुई हैं क्योंकि वह जनसाधारण के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने की आशा बंधाती है।

अल्पविकसित देश औद्योगिक दृष्टि से भी काफी पिछड़े हुए है। इन देशों को अपनी सामाजिक–आर्थिक समस्याओं को सुलझाने और अपनी राष्ट्रीय स्वाधीनता को स्थिरता प्रदान करने के लिए औद्योगिक विकास अति आवश्यक है अन्यथा इन्हें अपनी

आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए श्रम प्रधान उद्योगों के उत्पादन को बहुत सस्ते मूल्य पर निर्यात और प्रौद्योगिकी प्रधान उद्योगों के उत्पादन को भारी कीमत पर आयात करना होगा और इस तरह अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में उनका शोषण होता रहेगा। औद्योगिकीकरण द्वारा शहरीकरण, आधुनिक सुविधाओं जैसे–परिवहन एवं संचार, रोग एवं चिकित्सा, शिक्षा और अनुसंधान, इत्यादि को प्रोत्साहन मिलता है जो लोगों में रहन–सहन के ऊँचे स्तर, एवं नये विचार को बढ़ावा देता है। परन्तु प्रारम्भ में औद्योगिक विकास अधिक खर्चीला होने के कारण इसके के लिए व्यापक सार्वजनिक व्यय आवश्यक होता है। इसके अलावा इन देशों को उन्नत संयन्त्रों एवं तकनीकी विशेषज्ञों के लिए विकसित राष्ट्रों से सहायता लेनी पड़ती है जिसके लिए उन्हें भारी कीमत चुकानी पड़ती है। चूँकि यह खर्च व्यापक एवं दीर्घकालीक हित में होता है इसीलिए अल्पविकसित देशों के लिए यह खर्च उठाना आवश्यक हो जाता है। परन्तु अल्पविकसित देशों के सम्मुख सबसे महत्वपूर्ण समस्या यह है कि औद्योगीकरण का कौन सा तरीका अपनाये। औद्योगीकरण का एक तरीका यह है कि सारे उद्योगों का स्वामित्व और नियन्त्रण सरकार अपने हाथ में रखे और व्यक्ति को केवल एक साधन के रूप में उपयोग करे। जिसमें उनकी सारी आवश्यकताओं की पूर्ति तो की जाय परन्तु उनकी स्वतन्त्रता छीन ली जाय। जैसा की मार्क्सवादी एवं साम्यवादी व्यवस्था में देखने को मिलता है, जो वर्ग संघर्ष की विचारधारा पर आधारित है जो भूतपूर्व सोवियत संघ एवं आधुनिक जनवादी चीन द्वारा अपनाया गया। औद्योगीकरण का दूसरा तरीका उदारवादी–पूँजीवाद है, जिसमें व्यक्ति को स्वतन्त्रता तो प्रदान की जाती है परन्तु मुक्त प्रतिस्पर्धा के आधार पर उद्योग धन्धों एवं वाणिज्य को बढ़ावा दिया जाता है जैसा कि पश्चिमी यूरोप के देशों में देखने को मिलता है। अल्पविकसित देशों में नवीन स्वतन्त्रता प्राप्त होने के कारण व्यक्ति की स्वतन्त्रता को अधिक महत्व दिया जाता है। अतः औद्योगीकरण का मार्क्सवादी तरीका उनके लिए उपयुक्त नहीं है। दूसरी तरफ सामान्यतः अल्पविकसित देशों की सांस्कृतिक परम्परा में प्रतिस्पर्धा की भावना अनुपस्थित रही है। इन देशों में गिने–चुने लोग जो पश्चिमी शिक्षा प्राप्त किये होते हैं, वे इससे प्रेरित अवश्य हैं। परन्तु सम्पूर्ण देश को मुक्त प्रतिस्पर्धा के लिए खुला छोड़ देना विनाशकारी होगा। अतः अल्पविकसित देशों के लिए मध्यम मार्ग अपनाना ही उचित होगा, जिसमें उदारवादी पूँजीवाद, और मार्क्सवादी समाजवाद का मिश्रण हो जिसमें निजी क्षेत्र एवं सार्वजनिक क्षेत्र को साथ–साथ रहने दिया जाय। साथ ही राज्य सार्वजनिक हित को ध्यान में रखते हुए सम्पूर्ण आर्थिक गतिविधियों का नियमन

करते हुए राज्य एक कल्याणकारी राज्य की भूमिका निभाता है जैसा कि भारत सहित विश्व के कई देशों में मिश्रित अर्थव्यवस्था के स्वरूप में देखने को मिलता है।

स्वतंत्रता के प्रारम्भ में भारत द्वारा विकास की जो रणनीति अपनायी गई उसके निर्धारण में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका ब्रिटिश विरासत में मिली भारतीय अर्थव्यवस्था का स्वरूप, बीसवीं शताब्दी में अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का परिदृश्य, स्वतंत्रता संग्राम की विचारधारा तथा गाँधी एवं नेहरू की वैचारिक दृष्टिकोण का रहा है। आजादी के समय भारत की प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि दर नगण्य थी। कृषि एवं उद्योगों के विकास के लिए आधारभूत संरचना का अभाव था। जन मानस गरीबी, अशिक्षा, एवं बेरोजगारी के दुश्चक्र में जकड़ा हुआ था। ऐसे में नवस्वतंत्र भारत के समक्ष यह चुनौती थी कि वह किस प्रकार के विकास मॉडल को अपनाये जो भारतीय अर्थव्यवस्था एवं जनमानस को अंग्रेजी हुकूमत की नकारात्मक अर्थव्यवस्था एवं दुष्कार्यों से मुक्ति दिला सके। देश की आर्थिक उन्नति के लिए नियोजित विकास एवं बाजार उन्मुखी व्यवस्था में से किसको प्राथमिकता दी जाय। यह सर्वविदित है कि बाजार व्यवस्था में विकास हमेशा उच्चलाभ, मितव्ययिता एवं कार्यकुशलता को महत्व देता है, जबकि नियोजित विकास सीमित संसाधनों का व्यवस्थित उपयोग करता है ताकि इच्छित विकास लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। इसीलिए भारत में नियोजित विकास को ऐसे अभिकरण के रूप में प्राथमिकता दी गयी जिसके तहत राज्य विकास की प्राथमिकताओं के अनुरूप, विकास परियोजनाओं के माध्यम से सामाजिक एवं आर्थिक विकास को मूर्त रूप दे सके। जिसकी शुरूआत 1950 में प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में गठित योजना आयोग की स्थापना से हुई, जिसका मुख्य उद्देश्य देश में संसाधनों एवं जरूरतों के अनुरूप पंचवर्षीय प्रारूप तैयार करके आर्थिक संवृद्धि, आत्मनिर्भरता, पूर्ण रोजगार, सामाजिक न्याय, आर्थिक असमानता में कमी तथा गरीबी उन्मूलन आदि था। इस दिशा में योजना आयोग ने 1950 से 2012 तक कुल ग्यारह पंचवर्षीय योजना तथा तीन एक वर्षीय योजना बनायी। चूँकि भारत एक संघीय व्यवस्था वाला देश है इसीलिए संतुलित विकास को ध्यान में रखते हुए 1952 में राष्ट्रीय विकास परिषद का गठन किया गया जिसमें सभी राज्यों की सदस्यता यह सुनिश्चित करती है कि नियोजित विकास के पंचवर्षीय रूपरेखा में सभी राज्यों के संतुलित विकास की सम्भावना को सुनिश्चित किया जाय। परन्तु आजादी के सात दशक बाद भी सभी राज्यों का समान विकास न होने के कारण देश में आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक आधार पर क्षेत्रीय असमानता विद्यमान है। हालाँकि स्वतन्त्रतोपरान्त सरकार द्वारा विभिन्न

पंचवर्षीय योजनाओं, नीतियों एवं कार्यक्रम जैसे– ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराने के लिए महात्मा गाँधी रोजगार गारन्टी योजना (मनरेगा), पिछड़े क्षेत्रों के विकास के लिए विशेष पैकेज योजना यथा– पूर्वांचल विकास निधि, बुन्देलखण्ड पैकेज आदि के माध्यम से व्याप्त क्षेत्रीय असमानता को समाप्त करने का प्रयास किया जा रहा है जिसका इन क्षेत्रों के विकास पर सकारात्मक प्रभाव हो रहा है। परन्तु आजादी के सात दशक बाद भी पिछड़े राज्यों की स्थिति में कुछ विशेष बदलाव देखने को नहीं मिलता। आजादी के प्रारम्भिक अवस्था में जो राज्य आर्थिक एवं सामाजिक रूप से पिछड़े हुए थे जैसे– बिहार, राजस्थान, उत्तर प्रदेश वे आज भी पिछड़े हुए हैं, जिसका प्रमुख कारण अशिक्षा, स्वास्थ्य, अधिक जनसंख्या, रोजगार का अभाव, कृषि पर अधिक निर्भरता एवं आधुनिक तकनीक का अभाव, निम्न प्रतिव्यक्ति आय के साथ–साथ दृढ़ राजनीतिक इच्छा शक्ति का अभाव, दिशाहीन एवं अकुशल नौकरशाही, राजनीतिक भ्रष्टाचार इत्यादि है। भारत में आर्थिक पिछड़ापन एवं असमानता तो लगभग सभी क्षेत्रों में देखने को मिलता है परन्तु यह उत्तर भारतीय राज्यों विशेषकर राजस्थान, बिहार एवं उत्तर प्रदेश में अधिक देखने को मिलता है।

उत्तर प्रदेश एक कृषि प्रधान राज्य होने के साथ उद्योग प्रधान भी है जिसके उत्पादन एवं वितरण पर इस राज्य की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक विकास निर्भर करता है। प्रदेश की अधिक जनसंख्या एवं क्षेत्रफल के कारण आर्थिक एवं प्रशासनिक सुविधा की दृष्टि से इसे चार आर्थिक सम्भाग में विभाजित किया गया है परन्तु ये संभाग विकास की दृष्टि से एक समान नहीं हैं। अधिक जनसंख्या होने के कारण प्रदेश की भारतीय राजनीति में केन्द्रीय भूमिका है, क्योंकि 80 लोकसभा से निर्वाचित प्रतिनिधि केन्द्र सरकार के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके बावजूद भी उत्तर प्रदेश भारत के अन्य राज्यों जैसे– केरल, महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, तमिलनाडु आदि की तुलना में आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक रूप से काफी पिछड़ा हुआ है। प्रदेश के अन्दर भी आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक आधार पर क्षेत्रीय असमानता विद्यमान है। प्रदेश के कुछ क्षेत्र जैसे पश्चिमी उत्तर प्रदेश बेहतर बुनियादी सुविधाओं के कारण आर्थिक रूप से विकसित है तो कुछ क्षेत्र जैसे बुन्देलखण्ड एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश बुनियादी सुविधाओं के अभाव से जूझ रहे हैं।

पूर्वी उत्तर प्रदेश गंगा की तलहटी में स्थित भारत का एक प्रमुख भाग है जो प्रदेश के पूर्वी भाग में स्थित कृषि के दृष्टि से काफी उपजाऊ क्षेत्र है। परन्तु विकास के दृष्टि से अन्य क्षेत्रों खासकर पश्चिमी उत्तर प्रदेश एवं केन्द्रीय संभाग से पिछड़ा हुआ है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (एनसीआर) के करीब होने तथा हरित क्रान्ति के प्रभाव के कारण औद्योगिक एवं कृषि के साथ–साथ बुनियादी सुविधाओं जैसे–सड़क, बिजली, पानी, यातायात आदि में काफी विकसित है। वहीं पूर्वी उत्तर प्रदेश औद्योगिक विकास, कृषि के आधुनिक तकनीक एवं बुनियादी सुविधाओं के अभाव के कारण आर्थिक दृष्टि से प्रदेश के अन्य क्षेत्रों खासकर पश्चिमी उत्तर प्रदेश की तुलना में काफी पिछड़ा हुआ क्षेत्र है। हालाँकि राज्य द्वारा इस क्षेत्र के आर्थिक पिछड़ापन को दूर करने के लिए अनेक योजनाओं एवं कार्यक्रमों जैसे–पूर्वांचल विकास निधि की स्थापना, लघु एवं कुटीर उद्योगों जैसे– हथकरघा उद्योग, कालीन उद्योग, लकड़ी उद्योग आदि के प्रोत्साहन के साथ ही साथ शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि आदि को बढ़ावा दिया जा रहा है जिससे इस क्षेत्र का सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विकास सम्भव हो सके। परन्तु विकास की प्रक्रिया में यह क्षेत्र प्रदेश के अन्य क्षेत्रों यथा–पश्चिमी उत्तर प्रदेश एवं केन्द्रीय उत्तर प्रदेश की तुलना में कम है। जिसका प्रमुख कारण निम्न साक्षरता दर, कृषि पर अधिक निर्भरता एवं कृषि जोत का छोटा होना, आधुनिक कृषि संसाधनों एवं तकनीक का अभाव, औद्योगिक कल–कारखानों का अभाव, बुनियादी सुविधाओं के कमी के साथ–साथ किसान नेतृत्व का अभाव, सामाजिक भेदभाव की भावना का प्रबल होना भी है। जातीय आधार पर राजनीतिक भागीदारी एवं क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का गठन तथा बड़े राजनीतिक दलों द्वारा क्षेत्र की उपेक्षा, राजनीतिक भ्रष्टाचार एवं दोषपूर्ण नौकरशाही के साथ ही साथ भू–आर्थिक रूप से सम्पन्न वर्गों द्वारा स्थानीय संस्थाओं पर प्रभुत्व के कारण योजनाओं का सफल क्रियान्वयन न हो पाने आदि के कारण पूर्वी उत्तर प्रदेश में आर्थिक पिछड़ेपन की स्थिति बनी हुई है।

शोध प्रश्न (Research Question):

- ❖ आजमगढ़ के अल्पविकसित होने के पीछे उसकी भौगोलिक स्थिति किस हद तक जिम्मेदार है।
- ❖ क्या आम जनता का सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक विकास संबंधी नीतियों के प्रति जागरूक न होना इस क्षेत्र के अल्पविकास हेतु जिम्मेदार कारक है?

- ❖ इस क्षेत्र के पिछड़ेपन हेतु सामाजिक गठन किस हद तक जिम्मेदार है?
- ❖ स्थानीय शक्ति संरचना की प्रकृति क्या है तथा इसका आजमगढ़ के सर्वांगीण विकास में क्या योगदान है?
- ❖ दलीय प्रतिस्पर्धा ने किस प्रकार विकास–प्रक्रिया को प्रभावित किया है।

परिकल्पना (Hypothesis):

- ❖ पूर्वी उत्तर प्रदेश के जिलों विशेषकर आजमगढ़ के अल्पविकास में सबसे प्रमुख कारण लोगों का कृषि पर निर्भर होना तथा कृषि के जोत का आकार छोटा होना रहा है।
- ❖ जिले के लोगों में अत्यधिक जातीय, साम्प्रदायिक राजनीति की भावना का प्रबल होना भी कहीं न कहीं विकास को प्रभावित किया है।
- ❖ सरकारी नीतियों के क्रियान्वयन में नौकरशाही के अत्यधिक हस्तक्षेप के कारण योजनाओं का लाभ वास्तविक लोगों तक नहीं पहुँच पाता है।

शोध पद्धति (Research Methodology):

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को सम्पादित करने के लिए ऐतिहासिक, विवरणात्मक, विश्लेषणात्मक, आनुभविक, एवं तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है। इसमें शोध अभिकल्प के रूप में भार–रहित प्रतिनिध्यात्मक प्रतिदर्श सर्वेक्षण का चयन किया गया है। इस अभिकल्प में समग्र से पर्याप्त संख्या में प्रतिदर्शों का चयन यादृच्छिक रूप से किया गया है। ध्यातव्य है कि इसमें समग्र के किसी अनुभाग को विशेष वरीयता प्रदान नहीं किया जाता है इसलिए प्रतिदर्श भार–रहित होता है। इस प्रकार के सर्वेक्षण में प्रतिदर्श से सभी आवश्यक सूचनाएँ एक बार में ही प्राप्त कर ली जाती है तथा भिन्न–भिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत प्राप्त की गयी सूचनाओं के आधार पर सह–सम्बन्धात्मक विश्लेषण किया जाता है।

इस सम्बन्ध में यह समचिन है कि आँकड़ों के संग्रहण हेतु विभिन्न प्रविधियों का प्रयोग किया गया है। स्वसंरचित साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से ग्राम सभा के किसानों एवं जिला स्तर, विकास खण्ड स्तर तथा ग्राम पंचायत स्तर कृषि सम्बन्धी योजनाओं को लागू करने वाली संस्थाओं के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के साथ–साथ संबंधित ग्राम पंचायत के अध्यक्ष से कृषि सम्बन्धी आँकड़ों के एकत्रण हेतु प्रयोग किया

गया है। स्वसंरचित साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम किसानों के व्यक्तिगत पृष्ठभूमि एवं सरकार द्वारा कृषि से सम्बन्धित चलायी जा रही योजनाओं पर उनके विचार के साथ–साथ शोध परिकल्पना के परीक्षण हेतु विभिन्न प्रश्नों के माध्यम से आँकड़े एकत्र किये गये हैं। इस साक्षात्कार अनुसूची में लगभग समान प्रकृति के प्रश्न पूछे गये है ताकि तुलनात्मक विश्लेषण सम्भव हो सके।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों स्रोतों से आँकड़ो का संग्रहण किया गया है। प्राथमिक स्रोत के अन्तर्गत उत्तरदाताओं के साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से व्यक्तिगत तौर पर मिलकर आँकड़े एकत्र किये गये हैं। इसके अलावा सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा जारी रिपोर्ट, सार्वजनिक शोध संस्थाओं द्वारा जारी रिपोर्ट का उपयोग किया गया है। द्वितीयक स्रोत के रूप में विभिन्न प्रकार की पुस्तकों, प्रकाशित एवं अप्रकाशित शोध ग्रन्थों, शोध लेख, पत्र–पत्रिकाओं, समाचार पत्रों एवं इन्टरनेट का उपयोग किया गया है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में प्रतिदर्श के रूप में पूर्वी उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जनपद का चयन किया गया है। शोध प्रबन्ध के अध्ययन की प्रासंगिकता को बनाये रखने हेतु आजमगढ़ जनपद के कुल 22 विकास खण्डों में से दो विकासखण्ड एक विकसित एवं एक अल्पविकसित विकास खण्ड का चयन यादृच्छिक प्रतिदर्श के आधार पर किया गया है। क्योंकि शोध प्रबन्ध का उद्देश्य अल्पविकास के तुलनात्मक स्थिति का आकलन करना भी है। शोध प्रबन्ध में प्रतिदर्श के रूप में दोनों विकास खण्डों में से एक–एक ग्राम सभा के 100–100 किसान उत्तरदाताओं का चयन यादृच्छिक प्रतिदर्श के रूप में किया गया है। इन उत्तरदाताओं से प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में किया गया है।

अध्यायों का संक्षिप्त परिचय :

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को सम्पादित करने हेतु इसे कुल सात अध्याय में विभाजित किया गया है:

प्रथम अध्याय :

प्रथम अध्याय में राजनीतिक अल्पविकास की राजनीति को परिभाषित करते हुए विभिन्न विचारकों द्वारा अल्पविकास की दी गयी परिभाषाओं की व्याख्या के साथ–साथ अल्पविकास के कारण, प्रभाव, मापदण्ड, विशेषताएँ इत्यादि का संक्षिप्त एवं ऐतिहासिक विवरण प्रस्तुत किया गया हैं। साथ ही अल्पविकास की राजनीति से सम्बन्धित उपलब्ध

साहित्य की समीक्षा के साथ–साथ शोध अध्ययन का उद्देश्य, परिकल्पना, शोध प्रविधि एवं तकनीक, अध्ययन क्षेत्र तथा शोध अध्यायीकरण की संक्षिप्त प्रस्तुति की गयी है।

द्वितीय अध्याय :

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के दूसरे अध्याय 'भारत में अल्पविकास की राजनीति एवं क्षेत्रीय विश्लेषणः तुलनात्मक दृष्टिकोण' में अल्पविकास की राजनीति के अर्थ एवं परिभाषा की व्याख्या के साथ–साथ विकास एवं अल्पविकास के प्रमुख सिद्धांतों–यथा उदारवादी सिद्धांत, विकास का आधुनिक सिद्धांत , निर्भरता का सिद्धान्त, नव–उदारवाद एवं नव–राज्यवाद के सिद्धांतों एवं उनके प्रमुख समर्थक जैसे मिल्टन फ्रिडमैन, एलिस एडम्सन एवं पीटर इवांस के विचारों एवं सिद्धान्तों की आलोचनात्मक व्याख्या प्रस्तुत की गयी है।

उदारवादी विचारक राज्य को एक कल्याणकारी संस्था मानते हुए 'राज्य के न्यूनतम हस्तक्षेप' का समर्थन करते हुए 'पूँजीवाद' को बढ़ावा देते हैं जिसके अन्तर्गत उत्पादन और वितरण के प्रमुख साधनों को निजी स्वामित्व में रहते हुए राज्य के धनवान वर्गों पर कर लगाकर समाज के सभी धनी एवं निर्धन वर्गों के लिए सामाजिक सुरक्षा का प्रबन्ध करता है। वहीं नव उदारवाद 'कल्याणकारी' राज्य को आर्थिक विकास में बाधक मानता है। नव उदारवादी राज्य के विस्तार को 'फिर से सीमित' करने का समर्थन करता है और राज्य को सिर्फ 'पुलिस मैन' की भूमिका तक सीमित रखना चाहता है। जबकि समकालीन मार्क्सवादी चिन्तन में नव मार्क्सवादियों ने "पराश्रिता के सिद्धान्त" के अन्तगर्त अल्पविकसित देशों की वर्तमान दशा पूँजीवादी देशों के गतिविधियों का परिणाम बताया है। क्योंकि कि अन्तर्राष्ट्रीय पूँजीवादी अर्थव्यवस्था "तीसरी दुनिया" के देशों को काफी नुकसान पहुँचा रही है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में विनिमय के स्तर पर शक्तिशाली देशों का प्रभुत्व रहता है जो तीसरी दुनिया के देशों में अल्पविकास का मूल कारण है। साथ ही इस अध्याय में भारत विद्यमान में क्षेत्रीय असमानता के कारण एवं सिद्धांतो के आलोचनात्मक व्याख्या के साथ–साथ भारत में क्षेत्रीय असमानता का राज्यों पर प्रभाव की भी व्याख्या प्रस्तुत की गयी है।

तृतीय अध्याय :

शोध प्रबन्ध के तीसरे अध्याय 'पूर्वी उत्तर प्रदेश में अल्पविकासः राजनीतिक आर्थिक विश्लेषण' में पूर्वी उत्तर प्रदेश की भौगोलिक स्थिति, सामाजिक–जनसांख्यिकी, कृषि, संसाधन इत्यादि का विस्तृत व्याख्या के साथ–साथ प्रदेश के अन्य आर्थिक सम्भागों यथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश, केन्द्रीय उत्तर प्रदेश तथा बुन्देलखण्ड से, विकास के परिदृश्य जैसे– शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, कृषि संवृद्धि, भूमि आवंटन, इत्यादि के सन्दर्भ में तुलनात्मक विश्लेषण किया गया है। साथ ही पूर्वी उत्तर प्रदेश के आर्थिक विकास के लिए सरकार द्वारा संचालित विकास योजनाओं के साथ ही साथ पूर्वी उत्तर प्रदेश में राजनीतिक दलों की स्थिति, मुद्दे, नौकरशाही के स्वरूप एवं परिदृश्य तथा वर्चस्व की राजनीति का भी व्याख्या किया गया है। साथ ही इस तथ्य पर भी बल दिया गया है कैसे आधुनिक समाज और राजनीति के विकास के बावजूद प्रभुत्वशाली वर्ग एवं उनके वर्चस्व की जो राजनीति है वह विभिन्न रूपों में उत्पन्न होकर स्थानीय संस्थाओं जैसे– पंचायत, स्थानीय प्रशासन, एवं पुलिस पर अपना नियन्त्रण बनाये रखती है और प्रगति एवं विकास की दशा एवं दिशा को निर्धारित करती है।

चतुर्थ अध्याय :

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के चतुर्थ अध्याय 'आजमगढ़ में आर्थिक पिछड़ापन : आनुभविक अध्ययन' के अन्तर्गत उत्तरदाताओं से प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण किया गया है। साथ ही आजमगढ़ जनपद में कृषि क्षेत्र में व्याप्त आर्थिक पिछड़ेपन के सामान्य जानकारी से सम्बन्धित तथ्यों के साथ चारों परिकल्पनाओं का परीक्षण भी किया गया है।

पंचम अध्याय :

शोध प्रबन्ध के पाँचवें अध्याय 'सामाजिक गठन एवं स्थानीय शक्ति संरचना : विकास पर प्रभाव' के अन्तर्गत सामाजिक गठन की व्याख्या करते हुए इसके स्वरूप एवं प्रभाव की विस्तृत व्याख्या किया गया है। साथ ही आजमगढ़ जनपद में जातीय राजनीति एवं भूमि आवंटन के स्वरूप के साथ ही प्रभुत्वशाली वर्ग द्वारा स्थानीय निकायों पर किस प्रकार अपने प्रभुत्व को बनाये रखते हुए विकास की दशा एवं दिशा को निर्धारित करे हैं, का विस्तृत विश्लेषण किया गया है।

षष्ठम अध्याय :

शोध प्रबन्ध के अध्याय छः 'राज्य की योजनाएँ तथा उनका आजमगढ़ के विकास पर प्रभाव' में केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा जिले के विकास के लिए विशेषकर कृषि क्षेत्र में चलायी जा रही विभिन्न योजनाओं एवं कार्यक्रमों का विस्तृत विवरण के साथ ही साथ उनका आलोचनात्मक मूल्याकंन प्रस्तुत किया गया है।

सप्तम अध्याय :

शोध प्रबन्ध के अन्तिम अध्याय 'निष्कर्ष एवं सुझाव' के अन्तर्गत शोध प्रबन्ध के विभिन्न अध्यायों से प्राप्त निष्कर्षों की विवेचना प्रस्तुत की गयी है। साथ ही शोध प्रबन्ध के अन्त में कृषि विकास में वृद्धि हेतु सुझाव भी प्रस्तुत किया गया है।

निष्कर्ष एवं परिणाम :

प्रस्तुत अध्ययन उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले में अल्पविकास की राजनीति पर केंद्रित है।

तमसा के पावन तट पर स्थित आजमगढ़ जनपद पूर्वी उत्तर प्रदेश के जनपदों में से एक है जो आर्थिक दृष्टि से विशेषकर कृषि क्षेत्र में काफी पिछड़ा हुआ है। जिसका प्रमुख कारण जिले की भौगोलिक संरचना के साथ–साथ अशिक्षा एवं अज्ञानता के कारण कृषकों को योजनाओं की जानकारी न होना, कृषि पर अधिक निर्भरता एवं कृषि जोत का छोटा आकार, कृषि के आधुनिक संसाधनों एवं तकनीकी का अभाव, रोजगार की कमी, अधिक कागजी कार्यवाही एवं नौकरशाही का अत्यधिक हस्तक्षेप तथा राजनीतिक भ्रष्टाचार के साथ–साथ किसान नेतृत्व का अभाव आदि है।

प्रस्तुत शोध का प्रमुख उद्देश्य पूर्वी उत्तर प्रदेश में विशेषकर आजमगढ़ जनपद में आर्थिक पिछड़ेपन के राजनीतिक एवं अन्य कारणों के अध्ययन के साथ ही साथ शोध अध्ययन की परिकल्पना का परीक्षण करना भी है, जो आनुभविक आधार पर अवलोकन करने के पश्चात् सही सिद्ध पायी गयी है। जैसे– प्रथम परिकल्पना कि पूर्वी उत्तर प्रदेश के जिलों विशेषकर आजमगढ़ के अल्पविकास में सबसे प्रमुख कारण लोगों का कृषि पर निर्भर होना तथा कृषि के जोत का आकार छोटा होना रहा है, सही सिद्ध हुई। शोध ग्रन्थ के अध्याय चार के रेखाचित्र 4.4, 4.7 एवं 4.9 के आँकड़ों से स्पष्ट है कि जिले में कृषि पर अधिक निर्भरता एवं कृषि जोत का आकार छोटा होने के कारण

अल्पविकास की स्थिति बनी हुई है। रेखाचित्र 4.4 से स्पष्ट है कि आजमगढ़ जनपद के जहानागंज विकास खण्ड में 47 प्रतिशत लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि है वहीं मेहनगर विकास खण्ड में 54 प्रतिशत लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि है। साथ ही रेखाचित्र 4.7 से स्पष्ट है कि जहानागंज विकास खण्ड में 35 प्रतिशत कृषक ऐसे है जिनके परिवार के लगभग सभी सदस्य कृषि कार्य में लगे हुए हैं वहीं मेहनगर विकास खण्ड में 42 प्रतिशत कृषक ऐसे हैं जिनके परिवार के लगभग सभी सदस्य कृषि कार्य में लगे हुए हैं। रेखाचित्र 4.9 से स्पष्ट है कि जहानागंज विकास खण्ड में 17 प्रतिशत कृषक ऐसे है जिनके पास कुल कृषि भूमि 0–1 बीघा के मध्य, 31 प्रतिशत ऐसे कृषक हैं जिनके पास 1–2 बीघा के मध्य, 29 प्रतिशत कृषक 2–4 बीघा तथा 23 प्रतिशत कृषक ऐसे हैं जिनके पास 4 बीघा से अधिक कृषि भूमि है। जबकि मेहनगर विकास खण्ड में 32 प्रतिशत कृषक ऐसे हैं जिनके पास कुल कृषि भूमि 0–1 बीघा के मध्य, 29 प्रतिशत ऐसे कृषक हैं जिनके पास 1–2 बीघा के मध्य, 22 प्रतिशत कृषक 2–4 बीघा तथा 17 प्रतिशत कृषक ऐसे हैं जिनके पास 4 बीघा से अधिक कृषि भूमि है। अतः उपरोक्त आँकड़ों से स्पष्ट है कि दोषपूर्ण भूमि वितरण व्यवस्था एवं अधिक जनसंख्या तथा बढ़ते परिवारिक विखण्डन के कारण जिलें में कृषि जोत का आकार छोटा होता जा रहा है जिसके कारण जिले में कृषि की निम्न स्थिति बनी हुई है।

शोध की दूसरी परिकल्पना है कि जिले के लोगों में अत्यधिक जातीय, साम्प्रदायिक राजनीतिक भावना का प्रबल होना भी कहीं न कहीं विकास को प्रभावित किया है, सही सिद्ध पायी गयी। जिले में हिन्दू बहुल आबादी होने के साथ ही अल्पसंख्यक आबादी भी अधिक होने के कारण साम्प्रदायिक दंगे भी होते रहते हैं जिसके कारण विकास प्रक्रिया प्रभावित होती है। साथ ही स्थानीय अभिजन विशेषकर ग्राम प्रधान एवं नौकरशाही की मिली भगत के कारण योजनाओं का लाभ जनसाधारण को प्रदान न कर जाति विशेष या व्यक्तिगत सम्बन्ध के आधार पर दिये जाने के कारण योजनाओं का लाभ जनसाधारण को नहीं मिल पा रहा है। शोध ग्रन्थ के अध्याय चार के रेखाचित्र 4.23 एवं 4.28 से स्पष्ट है कि जिले में जातीय एवं बढ़ते राजनीतिक प्रभाव के कारण जनसाधारण योजनाओं के लाभ से वंचित रह जाता है। रेखाचित्र 4.23 के आँकड़ों से स्पष्ट है कि जहानागंज विकास खण्ड में 53 प्रतिशत एवं मेहनगर विकास खण्ड में 61 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया की कृषि के विकास पर सामाजिक व्यवस्था विशेषकर जात–पात एवं ऊँच–नीच का प्रभाव पड़ता है। रेखाचित्र 4.28 से स्पष्ट है कि

जहानागंज विकास खण्ड में 53 प्रतिशत तथा मेहनगर विकास खण्ड में 70 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि ग्राम प्रधान द्वारा सार्वजनिक हित के बजाय जाति विशेष एवं व्यक्ति विशेष के लिए कार्य किया जाता है। अतः प्रस्तुत आँकड़ों से स्पष्ट है कि जिले में जातीय एवं वर्गीय भावना प्रबल होने के कारण सरकारी योजनाओं का लाभ सर्वसाधारण को न मिलकर समाज के कुछ मुट्ठी भर प्रभुत्वशाली लोगों को मिल जाता है जिससे विकास का सार्वजनिक उद्देश्य अधूरा रह जाता है।

शोध की तीसरी और अन्तिम परिकल्पना है कि सरकारी नीतियों के क्रियान्वयन में नौकरशाही के अत्यधिक हस्तक्षेप के कारण योजनाओं का लाभ वास्तविक लोगों तक नहीं पहुँच पाता है भी सही सिद्ध पायी गयी। शोध ग्रन्थ के अध्याय चार के रेखाचित्र 4. 19 एवं 4.20 के आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि कृषि संबंधी सरकारी योजनाओं में अधिक कागजी कार्यवाही, अधिकारियों द्वारा टाल–मटोल करना, कमीशनखोरी एवं अनुदान का समय पर न मिलने आदि के कारण साधारण किसान कृषि सम्बन्धी योजनाओं के लाभ से वंचित रह जाता है। रेखाचित्र 4.19 के आँकड़ों से स्पष्ट है कि जहानागंज विकास खण्ड में जहाँ 21 प्रतिशत व मेहनगर विकास खण्ड में 19 प्रतिशत किसान अनुदान पर बीज लेते हैं। वहीं दोनों ही विकास खण्डों में क्रमशः 78 प्रतिशत एवं 81 प्रतिशत कृषक अनुदान पर बीज प्राप्त नहीं कर पाते। साथ ही रेखाचित्र 4.20 के आँकड़ों से स्पष्ट है कि जहानागंज विकास खण्ड में 27 प्रतिशत व मेहनगर विकास खण्ड में 19 प्रतिशत कृषक कृषि कार्य हेतु जिला सहकारी बैंक से कृषि ऋण लेते हैं वहीं दोनों ही विकास खण्डों में क्रमशः 73 प्रतिशत एवं 81 प्रतिशत कृषक कृषि सम्बन्धी ऋण नहीं लेते। इन आँकड़ों से स्पष्ट है कि नौकरशाही द्वारा सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में अधिक औपचारिकता एवं कागजी कार्यवाही तथा कृषि पर मिलने वाला अनुदान समय से न मिलने के कारण कृषक बाजार व्यवस्था पर अधिक निर्भर करते हैं।

अतः निष्कर्ष रूप में आजमगढ़ में कृषि क्षेत्र में पिछड़ेपन के निम्नलिखित कारण इस प्रकार हैंः

- अशिक्षा एवं अज्ञानता के कारण सरकार द्वारा कृषि सम्बन्धी संचालित योजनाओ एवं कार्यक्रमों की जानकारी जनसाधारण को न होने के कारण कृषक इन योजनाओं के लाभ से वंचित रह जाते हैं जिसके कारण जिले में कृषि के क्षेत्र में अल्पविकास बना हुआ है।

- अत्यधिक जनसंख्या एवं बढ़ते परिवार विखण्डन तथा दोषपूर्ण भूमि वितरण व्यवस्था के कारण कृषि जोत का आकार छोटा होता जा रहा है जिसके परिणाम स्वरूप जिले में निम्न उत्पादकता की स्थिति बनी हुई है।
- छोटी जाति समूह विशेषकर अनुसूचित जाति एवं अति पिछड़ा वर्ग जिनकी संख्या अधिक होने के कारण इनकी कृषि पर निर्भरता भी अधिक है, परन्तु इनके पास कृषि भूमि का अभाव है।
- किसानों को अनुदान पर मिलने वाले बीज, उर्वरक एवं कीटनाशक आदि समय पर न मिलने के कारण कृषक बाजार व्यवस्था पर अधिक निर्भर हैं।
- सरकार द्वारा बीज, उर्वरक एवं कीटनाशक आदि पर मिलने वाला अनुदान किसानों को बाद में उनके बैंक खाता में स्थानान्तरित किया जाता है जबकि कृषक को उसका मूल्य पहले चुकाना पड़ता है। अतः आर्थिक रूप से कमजोर किसान इस योजना के लाभ से वंचित रह जाते हैं।
- जिले में कृषि के आधुनिक तकनीक का अभाव एवं सिंचाई सुविधाओं जैसे राजकीय नपकूप, नहर आदि की समुचित व्यवस्था न होने के कारण कृषि मानसून पर अधिक निर्भर करती है।
- स्थानीय स्तर पर कार्य करने वाली संस्थाओं जैसे सहकारी समिति एवं राजकीय कृषि इकाई केन्द्रों पर समाज के भू–आर्थिक रूप सम्पन्न एवं जमींदारी की भावना से ग्रसित वर्गो के प्रभुत्व के कारण योजनाओं का लाभ साधारण वर्ग को नहीं मिल पा रहा है।
- योजनाओं के क्रियान्वयन में नौकरशाही के अत्यधिक हस्तक्षेप, अधिक कागजी कार्यवाही तथा कर्मचारियों के टाल–मटोल के कारण किसान कृषि सम्बन्धी योजनाओं जैसे– कृषि ऋण एवं फसल बीमा आदि के लेने से घबराते हैं।
- आर्थिक रूप से सम्पन्न कृषक इस राजनीतिक भावना से प्रेरित होकर कृषि ऋण लेते हैं कि सरकार कृषि ऋण माफ कर देगी तथा वे कृषि ऋण का उपयोग अन्य गैर कृषि कायों में करते हैं।
- स्थानीय स्तर पर कार्य करने वाली संस्थाओं की उदासीनता के कारण योजनाओं का सफल क्रियान्वयन नहीं हो पा रहा है जबकि ऊपर के स्तर

पर इन योजनाओं का सफल क्रियान्वयन किया जा रहा है। क्योंकि ये स्थानीय संस्थाएँ अपने आप को समय के साथ बदलना ही नहीं चाहती।

- स्थानीय स्तर विशेषकर ग्राम पंचायत स्तर पर कृषि मेला एवं विचार संगोष्ठियों का आयोजन न होने के कारण किसानों में आधुनिक कृषि यन्त्रों के उपयोग एवं वैज्ञानिक विधि के ज्ञान का अभाव है।
- समुचित बाजार व्यवस्था न होने तथा बिचौलियों के बढ़ती भूमिका के कारण किसानों को उत्पादित फसल की अच्छी कीमत न मिलने के कारण कृषि में अल्पविकास की स्थिति बनी हुई है।
- स्थानीय अभिजन यथा सांसद, विधायक एवं ग्राम प्रधान के द्वारा कृषकों का कृषि हेतु सहयोग न करना भी कृषि क्षेत्र में अल्पविकास का कारण है।
- स्थानीय स्तर पर योजनाओं के क्रियान्वयन में सामाजिक भेदभाव जैसे–जात–पात, ऊँच–नीच, अमीर–गरीब, भाई–भतीजावाद इत्यादि, के कारण योजनाओं का लाभ समाज के जनसाधारण वर्ग को न मिल पाने के कारण कृषि क्षेत्र में पिछड़ा हुआ है।
- जिले में कृषि क्षेत्र के पिछड़ेपन का एक प्रमुख कारण किसान नेतृत्व का अभाव है। जो किसानों को संगठित कर उनकी समस्याओं का समाधान कर सके। जैसा कि पश्चिमी उत्तर प्रदेश में चौधरी चरण सिंह, अजीत सिंह टिकैत आदि ने किया।

अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि आर्थिक विकास के लिए जहाँ एक ओर शिक्षा, जन–जागरूकता एवं जन–सहभागिता अपेक्षित है, वहीं दूसरी तरफ आर्थिक विकास के लिए संचालित विभिन्न योजनाओं एवं कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन के लिए कुशल एवं दक्ष नौकरशाही तथा स्थानीय स्तर पर राजनीतिक अभिजनों के सहयोग के साथ–साथ लोकतंत्र की आधारशिला मानी जाने वाले ग्राम पंचायतों के द्वारा अपने दायित्वों का कुशल निर्वहन कर समाज के सभी वर्गो एवं क्षेत्रों को विकास की मुख्य धारा में लाया जा सकता है।